सोशल मीडिया ऐप 'कू' और 'ट्विटर' की जंग में कौन जीतेगा ?

लोगों के पारस्परिक संबंधों, किसी मुद्दे पर राय बनाने और अवधारणा विकसित करने को लेकर सोशल मीडिया का सर्वव्यापी और व्यापक असर आधुनिक समाज की परिभाषित विशेषताओं में से एक रहा है. इसका साफ़ अर्थ यह है कि सोशल मीडिया का मंच अब एक बाज़ार है जिसमें असीम संभावनाएं हैं, जो लोगों को परंपरागत सोशल मीडिया के विकल्प के तौर पर प्रस्तुत कर उनकी क्षमताओं का पूरा इस्तेमाल करने के लिए प्रेरित करता है. पहले से भीड़–भाड़ वाले सोशल मीडिया बाज़ार ने एक ऐसे स्पिलिंटरनेट का रास्ता साफ़ किया है जो विभाजित है और किसी विशिष्ट हित समूह को अपनी सेवाएं प्रदान करता है. हालांकि, एक ऐसी दुनिया की संभावना जो तकनीक़ के ज़रिए एक दूसरे से जुड़ी हुई हो यह अभी भी दूर की कौड़ी लगती है.

पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के शासन काल के दौरान बड़ी तादाद में सोशल मीडिया यूज़र्स का तेज़ी से गैब और पार्लर जैसे प्लेटफॉर्म का चुनाव करना इस ट्रेंड की ताज़ा मिसाल है कि कैसे इंटरनेट समुदाय विभाजित हो जाता है. ज़्यादातर लोग जिन्होंने ट्विटर का इस्तेमाल छोड़कर वैकल्पिक सोशल मीडिया मंच का चुनाव किया उन्हें यह लगता था कि उनके राजनीतिक विचार को लिबरल एलिट द्वारा रोकने की कोशिश की जा रही है, जो ट्विटर जैसे मंच पर अपना प्रभाव जमाना चाहते हैं. ट्विटर ने ट्रंप को जैसे ही बैन किया वैसे ही सोशल मीडिया यूजर्स इसके प्रति उदासीन होने लगे और एक ऐसे सोशल मीडिया के विकल्प की तलाश में दूसरे मंच का इस्तेमाल करने लगे जिसमें उन्हें ज़्यादा स्वतंत्रता, कम नियम और घृणित बयानबाज़ी करने की भरपूर गुंजाइश नज़र आने लगी.

किसान आंदोलन को सही तरीके से हैंडल नहीं करने को लेकर कुछ ट्विटर यूजर्स ने भारत सरकार की छवि धूमिल करने की कोशिश की जिसे लेकर भारत सरकार ने ट्विटर से ऐसे अकाउंट को बैन करने को कहा था.

इसी तरह का अविश्वास ट्विटर के प्रति भारत में भी दक्षिणपंथी समर्थकों द्वारा इन दिनों दिखाया जा रहा है. किसान आंदोलन को सही तरीके से हैंडल नहीं करने को लेकर कुछ ट्विटर यूजर्स ने भारत सरकार की छवि धूमिल करने की कोशिश की जिसे लेकर भारत सरकार ने ट्विटर से ऐसे अकाउंट को बैन करने को कहा था. लेकिन ट्विटर ने ऐसे अकांउट पर कार्रवाई नहीं की जिसे लेकर भारत सरकार ने नाराज़गी जाहिर की थी जिसके बाद ट्विटर और बीजेपी समर्थकों के बीच बयानबाज़ी और तनाव का

माहौल बना. माहौल तब और बिगड़ गया जब ख़बर आई कि ट्विटर के सीईओ जैक डॉर्सी ने किसान आंदोलन के समर्थन में किए गए ट्विट्स को पंसद किया. इसके बाद से ही इस मामले को लेकर ट्विटर की तटस्थता पर सवाल उठने लगे. और जैसा कि अमेरिका में हुआ ठीक उसी तरह समाज के एक बड़े वर्ग को मंच प्रदान करने के लिए ट्विटर का भारतीय विकल्प 'कू' लोगों के बीच अपनी स्वीकार्यता बढ़ाने के अवसर तलाशने लगा.

आत्मनिर्भर भारत का ऐप

'कू' एक नया भारतीय ऐप है जिसने आत्मनिर्भर ऐप चैलेंज जीता और जो ट्विटर जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के ख़िलाफ़ भारतीय यूजर्स की नाराज़गी का फायदा उठा रहा है. महज़ एक साल के भीतर इस सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर आश्चर्यजनक तौर पर भारी ट्रैफिक देखी जा रही है. इसका इस्तेमाल करने वालों की तादाद दस गुना बढ़ी है. जिस तरह से जीओपी के सदस्य पार्लर का इस्तेमाल कर रहे हैं. उसी तरह से कू ऐप का इस्तेमाल बीजेपी सरकार में मंत्री पीयुष गोयल, स्मृति ईरानी से लेकर कंगना रनौत और अनुपम खेर जैसे सेलेब्रिटी भी कर रहे हैं और इसे अमेरिकी सोशल मीडिया का सटीक जवाब मान रहे हैं. अमेरिका में जैसे रातों रात गैब और पार्लर जैसे सोशल मीडिया मंच लोगों के बीच मशहूर हो गए कुछ उसी तरह भारत में भी हाल के दिनों में कू का विस्तार हुआ है, हालांकि यहां पर कई गंभीर अंतर भी देखे गए हैं. यह अंतर एक तरह से 'कू' ऐप को ट्विटर का प्रतिद्वन्द्वी मानने से हमें सावधान करता है. क्योंकि 'कू' की तरफ़ यूज़र्स का शिफ्ट होना एक तरह से एक ख़ास घटना को लेकर प्रतिक्रियावादी नतीज़ा है, ना कि ट्विटर के प्रति लोगों की धारणा में कोई बड़े बदलाव का परिणाम. यही वज़ह है कि भारत में ट्विटर की प्राथमिकता को कोई बड़ा ख़तरा नहीं दिखता है.

यह समझना बेहद ज़रूरी है कि 'कू' और 'पार्लर' या फिर 'गैब' किसी अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों के तहत ऑपरेट करते हैं, जिसमें यूज़र्स सोशल मीडिया के बारे में क्या समझते हैं और इसका कैसे इस्तेमाल करते हैं इसके अलग–अलग अनुमान हैं. बावजूद इसके कि 'कू' यूज़र्स को अलग अलग प्रांतीय भाषाओं में संवाद करने के लिए मंच मुहैया कराता है, ट्विटर के प्रतिद्वन्द्वी बनने की इसकी क्षमता का इसके ऑपरेशनल सीमाओं या फिर इसके फ़ायदे से ज़्यादा लेना–देना नहीं है. या विशुद्ध रूप से भारत में राजनीतिक राय जिस तरह बनती है और उसे ऑनलाइन जिस तरह से प्रस्तुत किया जाता है यह उसका नतीजा है.

अमेरिका में भी जिन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर कम से कम नियम के विकल्प होते हैं उनका प्रभाव वहां ज़्यादा देखा जाता है. इसकी वजह यह है कि बावजूद इसके कि सरकार में कौन सी पार्टी है, वहां के सार्वजनिक बहस में उदारवादी सहमति की जगह कम नहीं हुई है, और यह इस बात के लिए प्रेरित करता है कि सार्वजनिक मंच पर दक्षिणपंथी विचारधारा की जमकर खिल्ली उड़ाई जा सके. यहां तक कि जब ट्रंप शासन में थे, उन्हें पॉप्युलर वोट नहीं मिले थे, और कुछ लोग यह तर्क दे रहे थे कि उन्होंने सिर्फ़ एक ख़ास वर्ग की समस्याओं को ही उठाया और पूरे देश के लिए वो कभी सर्वमान्य नेता की छवि हासिल नहीं कर पाए थे.

अमेरिका में भी जिन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर कम से कम नियम के विकल्प होते हैं उनका प्रभाव

वहां ज़्यादा देखा जाता है. इसकी वजह यह है कि बावजूद इसके कि सरकार में कौन सी पार्टी है, वहां के सार्वजनिक बहस में उदारवादी सहमति की जगह कम नहीं हुई है

साल 2016 और 2020 में ओपिनियन पोल का ट्रंप के पक्ष में नहीं आना इस बात का संकेत था कि किस तरह ट्रंप समर्थकों की सार्वजनिक रूप से खिल्ली उड़ाई जाती थी. इस तरह के ट्रेंड का ही नतीज़ा था कि किसी ने इसे 'ख़ामोश वोटरों की प्रतिक्रिया' के रूप में बताया, जहां ट्रंप समर्थक ट्रंप के समर्थन के लिए उत्सुक तो दिखते थे, जिससे दोनों ही चुनावों में ओपिनियन पोल में ट्रंप के समर्थन के आधार को लेकर भ्रामक नज़रिया पैदा हुआ. कई रिसर्च में पाया गया कि 'सामाजिक अनुकूलता पूर्वाग्रह' या फिर यह विश्वास की ट्रंप को समर्थन करने का मतलब सामाजिक दूरी झेलने पर मज़बूर होना पड़ेगा, कई वोटरों को चुनाव के दौरान झूठ बोलने पर विवश किया. पार्लर और गैब जैसे सोशल मीडिया मंच ने ट्रंप समर्थकों की ऐसी ही भावनाओं को प्रेरित किया और जिन्हें लगता था कि उनकी आवाज़ नहीं सुनी जा रही है और जो अपने विचार खुले तौर पर नहीं प्रकट कर पा रहे थे, उन्हें स्वतंत्र रूप से अपने विचार रखने के लिए एक प्लेटफॉर्म मुहैया कराया.

भारत का अलग संदर्भ

हालांकि, भारत में यह संदर्भ लोगों के विचार की अभिव्यक्ति को नियंत्रित नहीं करता है. यहां उदारवादी सहमति, जिसमें बहुसंख्यकवादी विचारों को व्यक्त करने को हतोत्साहित किया जाता है, बीजेपी की लोकप्रियता की वजह से यह समाप्त होता जा रहा है, जिसका सबूत मुख्यधारा में दक्षिणपंथी बहस के मुद्दों को लगातार शामिल किया जाना है. इस तरह बहुसंख्यकवादी विचार और इसे भारत में हाथों हाथ लपक लेने का मतलब यह नहीं हुआ कि अमेरिका की तरह यहां यह सामाजिक बहिष्कार का जोख़िम पैदा करता है. यही वजह हो सकती है कि भारत में ख़ामोश वोटरों की प्रतिक्रिया जैसी कोई चीज नहीं दिखती है क्योंकि यहां खुल कर पार्टी लाइन का समर्थन करने की कोई बड़ी सामाजिक कीमत नहीं चुकानी पड़ती है. और तो और बीजेपी समर्थकों को यह लगता है कि उनके विचारों पर दबी ज़ुबान से चर्चा करने की कोई ज़रूरत नहीं है.

साल 2016 में ट्रंप की मुश्किल चुनावी जीत के मुकाबले मोदी सरकार ने भारी बहुमत से 2019 का चुनाव जीता था, और उदारवादी समूह जिसने सरकार के दावों का विरोध किया था वह जनमत के बहुत ही छोटे हिस्से तक सीमित रहा. इस तरह यह समझना कि अमेरिका की तरह जहां दक्षिणपंथी विचारधारा के समर्थक होने की भारी सामाजिक कीमत चुकानी होती है और उनका माखौल उड़ाया जाता है. और इसी वजह से ऐसे लोग पार्लर और गैब जैसे सोशल मीडिया मंच की तरफ आकर्षित होते हैं. लेकिन भारत में ऐसे संदर्भों की कोई जगह नहीं है, क्योंकि यहां बहुसंख्यकवादी विचारों को सार्वजनिक मंच पर ज़ाहिर करने की कोई बड़ी सामाजिक कीमत नहीं चुकानी होती है. यहां यह बात प्रमुख़ रूप से समझने की है, कि भारत जैसे देश में पार्टी लाइन पर विचार व्यक्त करना मुख्यधारा में है और जो लोग सरकार के साथ कई मुद्दों पर खड़े होते हैं उन्हें अमेरिका की तरह अलग–थलग यहां नहीं किया जा सकता है. इसलिए भारत में अगर बहुसंख्यकवादी विचारों को व्यक्त करने की सामाजिक कीमत कम है तो ट्विटर जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म को छोड़कर 'कू' जैसे प्लेटफॉर्म पर लोगों के आने की संभावना बेहद कम हो जाती है. क्योंकि ट्विटर जब–तक यह बदलता नहीं है, 'कू' पर लोगों का

जाना प्रतिक्रियावादी और कम समय के लिए होगा.

कू की अचानक से बढ़ी हुई प्रसिद्धि सोशल मीडिया के बड़े खिलाड़ियों के लिए संदेश है – जो भारत में अपना काम-काज का विस्तार करना चाहते हैं – कि स्मार्टफोन और सोशल मीडिया की मौजूदगी अब भारत के ग्रामीण इलाकों तक संभव हो चुकी है.

हालांकि, एक बात तय है कि कू की अचानक से बढ़ी हुई प्रसिद्धि सोशल मीडिया के बड़े खिलाड़ियों के लिए संदेश है – जो भारत में अपना काम–काज का विस्तार करना चाहते हैं – कि स्मार्टफोन और सोशल मीडिया की मौजूदगी अब भारत के ग्रामीण इलाकों तक संभव हो चुकी है. संदेश बेहद साफ़ है कि आचार संहिता एकरूप नहीं हो सकती और अलग–अलग देशों के मुताबिक इसमें बदलाव लाना पड़ सकता है. यहां तक कि हर देश के अनोखे सामाजिक-सांस्कृतिक ताने–बाने के द्वारा यह तय किया जाता है कि वहां कि सरकार बोलने की स्वतंत्रता, राष्ट्रीय सुरक्षा और प्रतिबंधों के सवाल पर किस तरह से प्रतिक्रिया देती है.

काफी विरोध और कानूनी नतीजों के लिए तैयार रहने की धमकी दिए जाने के बाद आख़िरकार ट्विटर यह स्वीकार करने को तैयार हो गया और भारत सरकार द्वारा 1435 हैंडल पर आपत्ति जताने के बाद 1398 हैंडल को हटा दिया. इस तरह कानूनी सज़ा की धमकी और इस बात को जानते हुए कि भारत दुनिया में ट्विटर का तीसरा सबसे बड़ा बाज़ार है, हो सकता है कि ट्विटर बाज़ार हितों के लिए अपने आदर्शों की क़ुर्बानी दे. क्योंकि ट्विटर का किया गया यह त्याग उसे इस बात का भरोसा दिलाएगा कि भारत में उसके अस्तित्व को कोई बड़ा ख़तरा नहीं है. हालांकि, यह कहने के साथ ही 'कू' भारत के लिए एक महत्वपूर्ण टूल के रूप में प्रयोग किया जाएगा जिसके ज़रिए ट्विटर जैसी दिग्गज कंपनियां – जिन्हें यह लगता है कि उनकी व्यापकता उन्हें अचूक बनाती है – उनके लिए यह संदेश देने का काम करेगा. 'कू' की बढ़ती लोकप्रियता भले ट्विटर जैसी बड़ी कंपनी के अस्तित्व के लिए कोई बड़ी चुनौती पेश नहीं करती हो लेकिन यह तय है कि प्रतिस्पर्द्धा का जोख़िम ट्विटर जैसी सोशल मीडिया की दिग्गज कंपनी को विनम्र बनने पर मज़बूर कर देगी, क्योंकि प्रतिस्पर्द्धा के इस दौर में सोशल मीडिया का कोई भी विकल्प किसी देश के क़ानून से बड़ा नहीं हो सकता है.

साभार- https://www.orfonline.org/ से